**राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर पीठ**

एकलपीठ सिविल रिट याचिका संख्या 7858/2004

राजस्थान राज्य, कलेक्टर (भूमि अभिलेख), अजमेर, राजस्थान के माध्यम से

**----याचिकाकर्ता**

**बनाम**

1. राजस्थान सिविल सेवा अपीलीय न्यायाधिकरण, जयपुर।
2. मूलचंद जादम पुत्र श्री तेज मल जादम, निवासी 133/आई, दयानंद कॉलोनी, रामनगर, अजमेर

**-----प्रत्यर्थीगण**

---

याचिकाकर्ता (गण) की ओर से : श्री प्रदीप कलवानिया
प्रत्यार्थी (गण) की ओर से : श्री सुनील समदड़िया,
श्री रमेश चंद बैरवा

---

**मानीय न्यायमूर्ति अनूप कुमार ढांड**

**निर्णय**

निर्णय सुरक्षित करने की तारीख : 23.03.2022

निर्णय उच्चारित करने की तारीख : 08.04.2022

**रिपोर्टेबल**

याचिकाकर्ता द्वारा राजस्थान सिविल सेवा अपीलीय न्यायाधिकरण, जयपुर (संक्षेप में 'ट्रिब्यूनल') द्वारा पारित दिनांक 31.08.2004 के आक्षेपित आदेश के खिलाफ तत्काल याचिका दायर की गई है, जिसके द्वारा प्रत्यर्थी संख्या 2 के दिनांक 21.09.2000 के अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश को रद्द कर दिया गया है और आपास्त कर दिया गया है।

मामले के संक्षेप में तथ्य यह है कि प्रत्यर्थी संख्या 2 को 01.05.1974 को पटवारी के पद पर नियुक्त किया गया था। 26 वर्ष की सेवा पूरी करने के बाद, उन्हें जिला कलेक्टर (भूमि अभिलेख) जिला अजमेर द्वारा राजस्थान सिविल सेवा (पेंशन) नियम, 1996 (संक्षेप में '1996 के नियम') के नियम 53 (आई) के तहत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करके

21.09.2000 के आदेश के तहत अनिवार्य सेवानिवृत्ति दी गई थी। दिनांक 21.09.2000 के आदेश को नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया है:-

> *"जबकि मूलचंद जादम पुत्र तेज मल जादम पदनाम निरीक्षक भू-अभिलेख, तहसील मसूदा ने 15 वर्ष की अर्हक सेवा पूरी कर ली है।*
>
> *अब, इसलिए, राजस्थान सिविल सेवा (पेंशन) नियम 1996 के नियम 53 (झ) द्वारा प्रदत्त अधिकार का प्रयोग करते हुए, राज्यपाल उक्त श्री मूल चंद जादम आई.एल.आर. तहसील मसूदा को एतदद्वारा सेवानिवृत करते हैं।*
>
> *अधोहस्ताक्षरी इस आदेश की प्राप्ति की तारीख से जनहित में सेवा से श्री मूल चंद जादम, आई.एल.आर. तहसील मसूदा को सेवानिवृत करते हैं (तीन महीने पहले के नोटिस के बदले में, उक्त नोटिस अवधि के लिए वेतन और भत्तों की राशि के रूप में 26910/- रुपये की राशि के लिए एक बैंक ड्राफ्ट संलग्न है)।*

दिनांक 21.09.2000 के आदेश से व्यथित होकर, प्रत्यर्थी संख्या 2 ने अधिकरण के समक्ष एक अपील प्रस्तुत की, जिसे दिनांक 31.08.2004 के आदेश द्वारा अनुमति दी गई और प्रत्यर्थी सं. 2 की अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश को रद्द कर दिया गया और याचिकाकर्ता को निर्देश दिया गया कि वह प्रत्यर्थी सं. 2 को सभी परिणामी लाभों के साथ ड्यूटी पर निरंतर मानते हुए इंस्पेक्टर (भूमि रिकॉर्ड) के पद पर बहाल करे। याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने तर्क दिया कि प्रत्यर्थी सं. 2 के सेवा कार्यकाल के दौरान, उनकी सेवाएं संतोषजनक नहीं पाई गईं क्योंकि उनके खिलाफ सजा के उन्नीस आदेश पारित किए गए थे। इसलिए, पुनरीक्षण समिति ने एक निर्णय लिया और अनिवार्य सेवानिवृत्ति के लिए प्रत्यर्थी सं. 2 के मामले की सिफारिश की क्योंकि वह सेवा में बने रहने का पात्र नहीं था।

विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि प्रत्यर्थी सं. 2 के आचरण के साथ-साथ उसकी वार्षिक गोपनीय रिपोर्ट (एसीआर) और वार्षिक प्रदर्शन मूल्यांकन रिपोर्ट (एपीएआर), सेवा फाइल और सेवा पुस्तिका आदि पर पुनरीक्षण समिति द्वारा सभी वस्तुनिष्ठ अभिलेखों और व्यक्तिपरक संतुष्टि के साथ विचार किया गया था और उसके बाद यह निष्कर्ष निकाला गया कि प्रत्यर्थी सं, 2 को सेवा में बनाए रखना सार्वजनिक हित में नहीं था। इसलिए, पुनरीक्षण समिति के साथ-साथ समीक्षा समिति ने प्रत्यर्थी संख्या 2 को अनिवार्य सेवानिवृत्ति देने के लिए सिफारिशें सही ढंग से पारित कीं।

अधिवक्ता ने आगे कहा है कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति के संबंध में कानून अच्छी तरह

से तय है, लेकिन अधिकरण ने कानून के सिद्धांतों को गलत तरीके से लागू किया है और प्रत्यर्थी सं. 2 की अनिवार्य सेवानिवृत्ति को रद्द कर दिया है। अधिवक्ता ने आगे कहा कि अधिकरण ने राजस्थान सिविल सेवा (पेंशन) नियम, 1996 (संक्षेप में '1996 के नियम') के नियम 53 (1) के प्रावधानों पर विचार नहीं करके गलती की है और अनिवार्य सेवानिवृत्ति के संबंध में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून पर भी विचार नहीं किया है। अधिवक्ता ने आगे कहा कि अधिकरण ने उसके समक्ष रखी गई सामग्री को गलत तरीके से पढ़ा और गलत निष्कर्ष निकाला और प्रत्यर्थी नंबर 2 के खिलाफ पारित सजा आदेशों की जांच करने में अवैधता दर्शाई, जो पहले ही अंतिम रूप प्राप्त कर चुके थे और जिन्हें उसके समक्ष चुनौती नहीं दी गई थी। इसलिए, अधिकरण द्वारा पारित आदेश अवैधता से ग्रस्त है। अधिवक्ता ने आगे यह भी कहा कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति के संबंध में कार्रवाई करने के लिए, राजस्थान सरकार द्वारा जारी परिपत्रों के अनुसार एक आंतरिक पुनरीक्षण समिति का गठन किया गया था। उक्त समिति का गठन अपर कलेक्टर-शहर, उपखंड अधिकारी, अजमेर को समिति के सदस्यों की रूप में लेने के साथ किया गया था और विभिन्न निरीक्षकों (भूमि अभिलेख) के संपूर्ण सेवा रिकॉर्ड की जांच करने के बाद, समिति ने प्रत्यर्थी संख्या 2 सहित तीन निरीक्षकों (भूमि रिकॉर्ड) के मामलों की सिफारिश की थी। समीक्षा समिति ने पुन इन तीनों निरीक्षकों (भूमि अभिलेख) के संपूर्ण अभिलेख की जांच की और इन सभी व्यक्तियों के सेवा रिकार्ड की जांच करने के बाद समीक्षा समिति ने प्रत्यर्थी संख्या 2 सहित दो निरीक्षकों (भूमि अभिलेख) की अनिवार्य सेवानिवृत्ति की सिफारिश की। तत्पश्चात्, सक्षम प्राधिकारी ने अभिलेखों और अनुवीक्षण समिति तथा समीक्षा समिति की सिफारिशों की जांच करने के बाद जनहित में प्रत्यर्थी संख्या 2 को सेवा से अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करने का निर्णय लिया और तदनुसार दिनांक 21-09-2000 को अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश पारित किया गया। अधिवक्ता ने आगे कहा कि अधिकरण के पास अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश के खिलाफ अपील पर सुनवाई करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था। राजस्थान सिविल सेवा अपीलीय अधिकरण का गठन राजस्थान सिविल सेवा (सेवा मामले अपीलीय न्यायाधिकरण) अधिनियम, 1976 (संक्षेप में '1976 का अधिनियम') के तहत किया गया है और 1976 के अधिनियम की धारा 2 (च) और धारा 4 के अनुसार, अधिकरण के पास 1976 के अधिनियम की धारा 2 (च) के अंतर्गत परिभाषित सेवा मामलों के संबंध में आदेश पारित करने का क्षेत्राधिकार है। धारा 2(च) में कहीं भी अनिवार्य सेवानिवृत्ति से संबंधित मामले शामिल नहीं हैं। इसलिए,

अधिकरण के पास अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश दिनांक 21.9.2000 से उत्पन्न अपील पर विचार करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था। इस प्रकार, आदेश बिना अधिकार क्षेत्र के पारित किया गया। अधिवक्ता ने आगे कहा कि 26.09.1994 और 20.07.1999 के दंड आदेशों को अधिकरण के समक्ष चुनौती नहीं दी गई थी, लेकिन फिर भी अधिकरण ने इसे रद्द करके और आपास्त करके अपने अधिकार क्षेत्र का उल्लंघन किया है।

अपनी दलीलों के समर्थन में, याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा किया है:—

1. बैकुंठ नाथ दास एवं अन्य बनाम मुख्य जिला चिकित्सा अधिकारी एवं अन्य, 1992 (2) एससीसी 299 में प्रकाशित;

2. भारत संघ एवं अन्य बनाम दुलाल दत्त, 1993 (2) एससीसी 179 में प्रकाशित;

3. राम मूर्ति यादव बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, 2020 (1) एससीसी 801 में प्रकाशित;

4. प्यारे मोहन लाल बनाम झारखंड राज्य और अन्य, (10) एससीसी 6932010 में प्रकाशित; और

5. केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल बनाम एचसी (जीडी) ओम प्रकाश, 2012 की सिविल अपील संख्या 5428, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा 4.2.2022 को निर्णित की गई।

अंत में, अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि अधिकरण द्वारा पारित दिनांक 31.08.2004 का आदेश कानून की नजर में अनुचित है और इसे इस न्यायालय द्वारा रद्द और निरस्त किया जाना चाहिए और प्रत्यर्थी सं. 2 के खिलाफ 21.09.2000 को पारित आदेश को न्याय के हित को पूरा करने के लिए बनाए रखा जाना चाहिए।

इसके विपरीत, प्रत्यर्थी संख्या 2 की ओर से पेश हुए अधिवक्ता ने कहा कि प्रत्यर्थी सं. 2 को वर्ष 1974 में पटवारी के पद पर नियुक्त किया गया था और उसके बाद 5.6.1992 को उसे चयन वेतनमान का लाभ दिया गया था। अधिवक्ता ने आगे कहा कि 1992 तक, 1974 से 1986 तक 14 सजा आदेश पारित किए गए थे और ये 14 सजा आदेश प्रत्यर्थी सं. 2 के पास बहुत अच्छी तरह से उपलब्ध थे, तब भी उन्हें चयन स्केल देने का लाभ 5.6.1992 को दिया गया था। इसलिए, प्रत्यर्थी सं. 2 पर लगाए गए दंड को उसकी अनिवार्य सेवानिवृत्ति के लिए नहीं माना जा सकता है। अधिवक्ता ने यह भी कहा है कि विभाग ने तीन भूमि रिकॉर्ड निरीक्षकों के नामों की सिफारिश की; रामेश्वर प्रसाद, भंवर

लाल जोशी और वर्तमान प्रत्यर्थी नंबर 2 को कई दंड आदेशों और एसीआर में प्रतिकूल प्रविष्टियों के आधार पर उनकी अनिवार्य सेवानिवृत्ति के लिए कहा गया था, लेकिन समीक्षा समिति ने याचिकाकर्ता और भंवर लाल जोशी की अनिवार्य सेवानिवृत्ति का निर्णय लिया और इसी तरह तीसरे व्यक्ति रामेश्वर प्रसाद का नाम छोड़ दिया गया। उन्होंने आगे कहा कि बीरम राम भट्ट, कायम अली और मदन लाल अजमेरा के मामलों को भी अनिवार्य सेवानिवृत्ति के लिए अनुशंसित किया गया था, क्योंकि उनके खिलाफ कई सजा के आदेश थे और उनके एसीआर, एपीएआर में प्रविष्टियां भी उनके खिलाफ प्रतिकूल थीं, लेकिन तब भी उन्हें अनिवार्य सेवानिवृत्ति नहीं दी गई थी। विभाग की ऐसी कार्रवाई भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन है और यह विभाग की ओर से दुर्भावना के समान है। अधिवक्ता ने तर्क दिया कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 के तहत, प्रत्यर्थी सं. 2 समानता और कानून के समान उपचार का दावा करने का पात्र है। जब रामेश्वर प्रसाद, बीरम राम भट्ट, कायम अली और मदन लाल अजमेरा के साथ-साथ याचिकाकर्ता और भंवर लाल जोशी को अनिवार्य सेवानिवृत्ति के लिए सिफारिश करने के लिए पुनरीक्षण समिति द्वारा यही निर्णय लिया गया है, तो समीक्षा समिति को प्रत्यर्थी सं. 2 और भंवर लाल जोशी के नामों को चुनने और उनकी अनिवार्य सेवानिवृत्ति के लिए चुनने के बजाय उनमें से प्रत्येक के साथ समान व्यवहार करना चाहिए था और उनके उपरोक्त समान रूप से प्रस्तावित व्यक्ति की भांति ही उनके नाम भी हटा देने चाहिए थे। अधिवक्ता ने आगे कहा कि अधिकरण ने इन सभी तथ्यों को ध्यान में रखा है और प्रत्यर्थी सं. 2 के अनिवार्य सेवानिवृत्ति आदेश को रद्द करने और रद्द करने का आदेश सही पारित किया है। प्रत्यर्थी सं. 2 के वकील ने निष्पक्ष रूप से स्वीकार किया है कि सजा का आदेश और प्रत्यर्थी सं. 2 के एसीआर में प्रतिकूल प्रविष्टियों को अधिकरण के समक्ष चुनौती नहीं दी गई थी, लेकिन अधिकरण ने इसे रद्द करने में अपने अधिकार क्षेत्र का उल्लंघन किया है। अधिवक्ता ने आगे स्वीकार किया कि अधिकरण के पास इस तरह के आदेश को रद्द करने का अधिकार नहीं था।

अधिवक्ता ने आगे कहा कि अधिकरण के पास 1976 के अधिनियम की धारा 2 (च) के तहत अनिवार्य सेवानिवृत्ति से संबंधित मामलों की सुनवाई और निर्णय लेने का अधिकार क्षेत्र है। अपनी दलीलों के समर्थन में, प्रत्यर्थी सं. 2 की ओर से पेश अधिवक्ता ने *देवी सिंह बनाम राजस्थान सरकार और अन्य (खंडपीठ सिविल रिट याचिका संख्या*

*2515/2000)* के मामले में इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा पारित दिनांक 26.04.2001 के आदेश पर भरोसा किया है जिसमें इसी तरह का विवाद इस न्यायालय के समक्ष आया था कि 'क्या रिट याचिका अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश के खिलाफ सीधे इस न्यायालय के समक्ष होगी या अधिकरण ऐसे मामलों की सुनवाई और निर्णय करेगा? उक्त याचिका में याचिकाकर्ता को अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश की शुद्धता पर सवाल उठाते हुए राजस्थान सिविल सेवा अपीलीय न्यायाधिकरण से संपर्क करने की स्वतंत्रता देने का निर्णय लिया गया था।

प्रत्यर्थी सं. 2 के अधिवक्ता ने बैकुंठ नाथ दास एवं अन्य (सुप्रा.) के निर्णय पर भरोसा किया है जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने पैरा संख्या 34 में निम्नानुसार टिप्पणी की है-

"34. उपरोक्त चर्चा से निम्नलिखित सिद्धांत निकलते हैं:

(i) अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश कोई सजा नहीं है। इसका अर्थ कोई कलंक नहीं है और न ही दुर्व्यवहार का कोई सुझाव है।

(ii) यह आदेश सरकार को यह राय बनाने पर पारित करना होगा कि किसी सरकारी कर्मचारी को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करना जनहित में है। आदेश सरकार की व्यक्तिपरक संतुष्टि पर पारित किया जाता है।

(iii) अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश के संदर्भ में प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का कोई स्थान नहीं है। इसका अर्थ यह नहीं है कि न्यायिक जांच को पूरी तरह से बाहर रखा गया है। जबकि उच्च न्यायालय या यह न्यायालय अपीलीय अदालत के रूप में मामले की जांच नहीं करेगा, यह हस्तक्षेप कर सकता यदि यह संतुष्ट है कि आदेश इस प्रकार पारित किया गया है: (क) दुर्भावनापूर्ण या (ख) यह बिना किसी सबूत पर आधारित है या (ग) यह मनमाना है- इस अर्थ में कि कोई भी उचित व्यक्ति दी गई सामग्री पर अपेक्षित राय नहीं बनाएगा; संक्षेप में, यदि यह विकृत क्रम पाया जाता है।

(iv) सरकार (या समीक्षा समिति, जैसा भी मामला हो) को इस मामले में निर्णय लेने से पहले सेवा के पूरे रिकॉर्ड पर विचार करना होगा - निश्चित रूप से बाद के वर्षों के दौरान रिकॉर्ड और प्रदर्शन को अधिक महत्व देना होगा। इस प्रकार विचार किए जाने वाले रिकॉर्ड में स्वाभाविक रूप से गोपनीय रिकॉर्ड/चरित्र रोल में प्रविष्टियां शामिल होंगी, जो अनुकूल और प्रतिकूल दोनों होंगी। यदि किसी सरकारी कर्मचारी को प्रतिकूल टिप्पणियों के बावजूद उच्च पद पर पदोन्नत किया जाता है, तो ऐसी टिप्पणियां अपना प्रभाव खो देती हैं, खासकर तब, जब पदोन्नति योग्यता (चयन) पर आधारित होती है, न कि वरिष्ठता पर।

(v) अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश केवल इस आधार पर अदालत द्वारा रद्द नहीं किया जा सकता है कि इसे पारित करते समय प्रतिकूल टिप्पणियों को भी ध्यान में रखा गया था। यह परिस्थिति अपने आप में हस्तक्षेप का आधार नहीं हो सकती। हस्तक्षेप केवल उपर्युक्त (iii) में उल्लिखित आधारों पर ही स्वीकार्य है। इस पहलू पर ऊपर पैरा 29 से 31 में चर्चा की गई है।

प्रत्यर्थी सं. 2 के अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि विभाग का कोई व्यक्तिपरक निर्णय नहीं था और प्रत्यर्थी सं. 2 की अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश इस कारण से दुर्भावनापूर्ण था कि प्रत्यर्थी सं. 2 के साथ भेदभाव किया गया था क्योंकि पुनरीक्षण समिति ने तीन व्यक्तियों के नामों की सिफारिश की थी; रामेश्वर प्रसाद, भंवर लाल जोशी और वर्तमान प्रत्यर्थी सं 2 को उनकी अनिवार्य सेवानिवृत्ति के लिए कहा गया था, लेकिन समीक्षा समिति ने रामेश्वर प्रसाद का नाम हटा दिया है। इस प्रकार विभाग की ओर से कार्रवाई मनमानी है और अधिकरण ने इन तथ्यों पर सही विचार किया है और प्रत्यर्थी सं. 2 के अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश को सही ढंग से रद्द कर दिया है। अंत में, अधिवक्ता ने रिट याचिका को खारिज करने के लिए प्रार्थना की।

मैंने दोनों पक्षों की ओर से पेश हुए विद्वान अधिवक्ताओं को सुना है और ऊपर उद्धृत निर्णयों सहित मुझे उपलब्ध कराई गई पूरी सामग्री का भी अध्ययन किया है।

यह उल्लेख किया जा सकता है कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति के मुद्दे पर माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा कई निर्णयों में विचार किया गया है, विशेष रूप से बैकुंठनाथ दास और अन्य (सुप्रा.) के मामले में, जिसमें यह माना गया है कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश एक सजा नहीं है, लेकिन इसका अर्थ कोई कलंक नहीं है और न ही दुर्व्यवहार का कोई सुझाव है। अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश सार्वजनिक हित में है और सरकार की व्यक्तिपरक संतुष्टि पर पारित किया जाता है और इसे इस न्यायालय द्वारा केवल इस कारण से रद्द नहीं किया जा सकता है कि एक बार किसी कर्मचारी के खिलाफ पारित कई दंड आदेशों के बावजूद उसे पदोन्नति दी गई थी।

**पंजाब सरकार बनाम गुरदास सिंह, 1998 (4) एससीसी** 92 में प्रकाशित, मामले में उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की:–

"किसी सरकारी कर्मचारी को समय से पहले सेवानिवृत्त करने का निर्णय लेने से पहले, अधिकारियों को सेवा के पूरे रिकॉर्ड पर विचार करने की आवश्यकता होती है। पदोन्नति अर्जित करने या दक्षता सीमा लगाने या

उच्च रैंक प्राप्त करने से पहले किसी भी प्रतिकूल प्रविष्टि को समाप्त नहीं किया जाता है और कर्मचारी के पूरे सेवा कार्यकाल के दौरान उसके समग्र प्रदर्शन पर विचार करते समय इसे ध्यान में रखा जा सकता है, चाहे उसे सेवा में बनाए रखना सार्वजनिक हित में हो। कर्मचारी की सेवा के पूरे रिकॉर्ड में किसी भी असूचित प्रतिकूल प्रविष्टियों को भी शामिल किया जाएगा।

**यू.पी. सरकार एवं अन्य बनाम बिहारी लाल, 1994 (एसयूपीपी) 3 एससीसी 593** में प्रकाशित मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की:-

"यह रिकॉर्ड का समग्र आकलन है, प्राधिकारी इस निर्णय पर पहुंचेगा कि क्या जनहित में सरकारी कर्मचारी को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त किया जाना चाहिए। एक उपयुक्त मामले में, ठोस सामग्री नहीं हो सकती है, लेकिन उसके चारों ओर निर्मित अधिकारी की प्रतिष्ठा ऐसी हो सकती है कि उसके आगे बने रहने से सार्वजनिक सेवा की दक्षता खतरे में पड़ जाएगी और अन्य लोक सेवकों के बीच अनुशासनहीनता पैदा होगी। इसलिए, सरकार वैध रूप से एक सरकारी कर्मचारी को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करने की अपनी शक्ति का उपयोग कर सकती है। न्यायालय को यह देखना होगा कि क्या शक्ति का प्रयोग करने से पहले, प्राधिकरण ने कुछ प्रतिकूल टिप्पणियों को भी शामिल करते हुए समग्र रिकॉर्ड को ध्यान में रखा है, हालांकि तकनीकी कारणों से अपील या संशोधन पर इन्हें हटाया जा सकता है। लोक सेवा में दक्षता बढ़ाने के लिए जनहित में लिए गए प्रामाणिक निर्णय पर ध्यान देने की आवश्यकता है। शक्ति के किसी भी दुर्भावनापूर्ण प्रयोग या शक्ति के मनमाने प्रयोग के अभाव में, एक संभावित अलग निष्कर्ष अदालत द्वारा हस्तक्षेप का आधार नहीं होगा।

**गुजरात सरकार एवं अन्य बनाम सूर्यकांत चुन्नीलाल शाह, 1998 (8) जेटी 326** में प्रकाशित मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने कहा कि जब कोई उपयुक्त प्राधिकारी यह राय बनाता है कि सरकारी कर्मचारी की अनिवार्य सेवानिवृत्ति सार्वजनिक हित में है, तो न्यायालय ऐसे आदेश में हस्तक्षेप नहीं करेगा।

**मदन मोहन चौधरी बनाम बिहार सरकार, 1999 (1) जेटी 459** में प्रकाशित मामले

में माननीय उच्चतम न्यायालय ने अपने पूर्व निर्णयों की एक बड़ी संख्या पर विचार किया और कहा कि किसी भी समय, अर्थात किसी भी दूरस्थ स्तर पर सामान्य प्रक्रिया में दर्ज की गई प्रतिकूल घटनाओं को ध्यान में रखा जा सकता है, क्योंकि मामले के पूरे रिकॉर्ड की जांच में किसी भी समय दर्ज की गई पिछली प्रविष्टि शामिल होगी। एकमात्र आवश्यकता यह है कि प्रविष्टि एक सामान्य क्रम में दर्ज की जानी चाहिए।

**रजत बरन राय और पश्चिम बंगाल सरकार और अन्य, रिट याचिका संख्या 578/1998 (डायरी संख्या 16843/1998)** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने 13.04.1999 को निर्णय लिया है कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति की शक्ति का प्रयोग जनहित में किया जाना चाहिए और इसके लिए प्राधिकारी को इस बात से संतुष्ट होना चाहिए कि ऐसा आदेश पारित करने के लिए पर्याप्त सामग्री विवरण हैं।

बैकुंठ नाथ दास (सुप्रा.) में, अपीलार्थी को सिविल सर्जन द्वारा फार्मासिस्ट के रूप में नियुक्त किया गया था और वह राज्य सरकार के अधीन सेवारत था। अपनी सेवा के दौरान, लगातार सिविल सर्जनों ने उनके सीआर में कई प्रतिकूल कार्य दर्ज किए थे, जो उन्हें सूचित नहीं किए गए थे। उनके सेवा की अपेक्षित अवधि निर्धारित करने के बाद, एक समीक्षा समिति ने असूचित प्रतिकूल प्रविष्टियों और अन्य सामग्री को ध्यान में रखते हुए यह निर्णय लिया कि उन्हें अनिवार्य रूप से सेवा से सेवानिवृत्त किया जाए। तदनुसार, राज्य सरकार ने उनकी अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश पारित किया। अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय में आदेश को चुनौती दी। उच्च न्यायालय ने समीक्षा समिति की कार्यवाही और अपीलार्थी की गोपनीय चरित्र सूची को देखा और राय दी कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश न केवल प्रतिकूल टिप्पणियों पर, बल्कि अन्य सामग्री पर भी पारित किया गया था और यह सामग्री इस निष्कर्ष को सही नहीं ठहराती है कि उक्त टिप्पणी विधिवत या ठीक से दर्ज नहीं की गई थी। इसलिए उच्च न्यायालय ने अपील को खारिज कर दिया जिसके खिलाफ, उन्होंने उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील को प्राथमिकता दी। उच्चतम न्यायालय ने कहा कि उपरोक्त परिस्थितियों में, यह नहीं कहा जा सकता है कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश दुर्भावना से ग्रस्त है या यह बिना किसी सबूत पर आधारित है या यह मनमाना है। सरकार द्वारा अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश यह राय बनाने पर पारित किया जाता है कि किसी सरकारी कर्मचारी को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करना सार्वजनिक हित में है। यह आदेश सरकार की व्यक्तिपरक संतुष्टि पर पारित किया जाता है।

सरकारी कर्मचारी को जनहित में अनिवार्य सेवानिवृत्ति देने का निर्णय लेने से पहले सरकार को सेवा के पूरे रिकॉर्ड पर विचार करना होता है। उच्चतम न्यायालय ने यह भी माना कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश केवल इस आधार पर अदालत द्वारा रद्द नहीं किया जा सकता है कि इसे पारित करते समय, असूचित प्रतिकूल टिप्पणियों को भी ध्यान में रखा गया था। यह परिस्थिति अपने आप में हस्तक्षेप का आधार नहीं हो सकती।

*केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल बनाम एचसी (जीडी) ओम प्रकाश (सुप्रा.)* मामले में, निम्नानुसार कहा गया है:–

"6. बैकुंठ नाथ दास मामले में निर्णय के बाद, तीन न्यायाधीशों की पीठ ने पोस्ट एंड टेलीग्राफ बोर्ड बनाम सीएसएन मूर्ति के रूप में रिपोर्ट किए गए एक निर्णय में कहा कि अदालतें अनिवार्य सेवानिवृत्ति की शक्ति के प्रयोग में हस्तक्षेप नहीं करेंगी, अगर ऐसा निर्णय प्रामाणिक रूप से और रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर लिया गया है। न्यायालय ने निम्नानुसार कहा:

> "5. ....क्या कर्मचारी का आचरण इस तरह के निष्कर्ष को सही ठहराने के लिए है, यह मुख्य रूप से विभागीय अधिकारियों को तय करना है। अपराध की प्रकृति और क्या यह इस हद तक है कि कर्मचारी की अनिवार्य सेवानिवृत्ति की आवश्यकता है, इस पर मुख्य रूप से सरकार को निर्णय लेना है। अदालतें इस शक्ति के प्रयोग में हस्तक्षेप नहीं करेंगी, यदि ऐसा प्रामाणिक और रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर किया जाता है। वर्तमान मामले में कोई दुर्भावना नहीं बरती गई है। उच्च न्यायालय का एकमात्र सुझाव यह है कि रिकॉर्ड में ऐसी कोई सामग्री नहीं है जो प्रत्यर्थी के खिलाफ की गई कार्रवाई को सही ठहराए। हम सहमत नहीं हो पा रहे हैं। हमारी राय में, ऐसी सामग्री थी जो दर्शाती है कि समीक्षाधीन अवधि के पिछले दो वर्षों में याचिकाकर्ता की दक्षता कम हो गई थी और इसलिए, हमारे लिए विभाग के निष्कर्ष को दुर्भावनापूर्ण, विकृत, मनमाना या अनुचित मानना संभव नहीं है।

7. माननीय उच्चतम न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने भारत संघ बनाम दुलाल दत्त (सुप्रा.) के मामले में भारतीय रेलवे में भंडार नियंत्रक की अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश की जांच की। यह माना गया कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश सजा का आदेश

नहीं है। यह सरकार का विशेषाधिकार है लेकिन यह सामग्री पर आधारित होना चाहिए और इसे सरकार की व्यक्तिपरक संतुष्टि पर पारित किया जाना चाहिए और यह कि इसे आख्यापक आदेश होने की आवश्यकता नहीं है। इस न्यायालय ने निम्नानुसार कहा:

> "18. यह देखा जाएगा कि अधिकरण ने मामले की परिस्थितियों में यह मानने में पूरी तरह से गलती की कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति के लिए एक आख्यापक आदेश होना चाहिए था। यह न्यायालय आर.एल. बुटेल बनाम भारत संघ [(1970) 2 एससीसी 876] और भारत संघ बनाम जे.एन. सिन्हा [(1970) 2 एससीसी 458] के मामले से ही बार-बार जोर देता रहा है कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश दंड का आदेश नहीं है। यह वास्तव में सरकार का विशेषाधिकार है लेकिन यह सामग्री पर आधारित होना चाहिए और इसे सरकार की व्यक्तिपरक संतुष्टि पर पारित किया जाना चाहिए। अक्सर, न्यायालय द्वारा जांच करने पर सरकार सामग्री का खुलासा कर सकती है लेकिन यह इस कथन से बहुत अलग है कि आदेश एक आख्यापक आदेश होना चाहिए। अनिवार्य सेवानिवृत्ति के किसी आदेश को आख्यापक आदेश होने की आवश्यकता नहीं है। अधिकरण के आदेश से ही यह स्पष्ट है कि सरकार के पास उसके समक्ष समीक्षा समिति की रिपोर्ट थी, फिर भी उसने प्रत्यर्थी को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करना उचित समझा। इस आदेश को दुर्भावनापूर्ण या कानून में मनमाना नहीं कहा जा सकता है।

9. **भारत संघ बनाम वीपी सेठ मामले में, 1994 में एससीसी (एल एंड एस) 1052 में** प्रकाशित बैकुंठ नाथ दास और अन्य निर्णयों पर भरोसा करते हुए, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा इसे निम्नानुसार माना गया था:

> "3. इन सिद्धांतों को बाद के निर्णय में अनुमोदन के साथ दोहराया गया था। इसलिए, ऐसा प्रतीत होता है कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश केवल दुर्भावना, मनमानी या विकृति के आधार पर न्यायिक समीक्षा के अधीन किया जा सकता है और यह कि *ऑडी अल्टरनेटम पार्टम* का नियम लागू नहीं होता है क्योंकि ऐसी स्थिति में अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश प्रकृति में दंडात्मक नहीं है। इस प्रकार इस न्यायालय के दो

निर्णयों द्वारा कानून की स्थिति तय की गई है, हम समझते हैं कि अधिकरण के आदेश को बनाए नहीं रखा जा सकता है क्योंकि यह उक्त दो निर्णयों में निर्धारित सिद्धांतों के विपरीत है।

इस मामले में, प्रत्यर्थी सं. 2 के मामले की जांच उपरोक्त कानूनी स्थिति को देखते हुए की गई है। 1996 के नियमों के नियम 53 (1) द्वारा प्रदत्त किसी सरकारी कर्मचारी को समय से पहले सेवानिवृत्त करने की शक्ति में तीन पूर्व-आवश्यकताएं हैं, अर्थात (i) सरकारी कर्मचारी को सेवानिवृत्त करना जनहित में है, (ii) कि उसने 15 वर्ष की सेवा पूरी कर ली है और (iii) उसने 50 वर्ष की आयु प्राप्त कर ली है। नियुक्ति प्राधिकारी, इस बात से संतुष्ट होने पर कि संबंधित सरकारी कर्मचारी की अकर्मण्यता या संदिग्ध सत्यनिष्ठा या सरकारी कर्तव्यों के निर्वहन में अक्षमता या सरकारी कर्तव्यों के उचित निष्पादन में अक्षमता के कारण उसकी उपयोगिता समाप्त हो गई है, संबंधित सरकारी कर्मचारी को जनहित में सेवानिवृत्त होने की आवश्यकता हो सकती है। प्रत्यर्थी संख्या 2 को निम्नलिखित दंड दिए गए हैं:—

| क्र.सं. | तारीख | प्रावधान | प्रावधान के तहत सजा |
|---|---|---|---|
| 1. | 10.12.1976 | सीसीए नियमों का नियम 17 | निंदा |
| 2. | 31.12.1977 | एलआर नियमों का नियम 15 (2) | चेतावनी |
| 3. | 15.03.1978 | सीसीए नियमों का नियम 17 | निंदा |
| 4. | 13.04.1978 | एलआर नियमों का नियम 15 (2) | चेतावनी |
| 5. | 28.01.1981 | सीसीए नियमों का नियम 17 | लिखित चेतावनी |
| 6. | 05.11.1982 | सीसीए नियमों का नियम 17 | निंदा |
| 7. | 10.11.1982 | सीसीए नियमों का नियम 17 | संचयी प्रभाव से इनमें से किसी को भी प्रभावित किए बिना एक ग्रेड वेतन वृद्धि को रोकना |
| 8. | 22.08.1982 | सीसीए नियमों का नियम 17 | संचयी प्रभाव के बिना एक ग्रेड वेतन वृद्धि को रोकना |
| 9. | 22.07.1982 | सीसीए नियमों का नियम 17 | संचयी प्रभाव के बिना एक ग्रेड वेतन वृद्धि को रोकना |
| 10. | 03.05.1983 | सीसीए नियमों का नियम 17 | निंदा |
| 11. | 01.04.1983 | एलआर नियमों का नियम 15(2) | निंदा |
| 12. | 05.02.1982 | एलआर नियमों का नियम 15(2) | रिकॉर्ड की गई चेतावनी। |
| 13. | 30.11.1985 | एलआर नियमों का नियम 15 (2) | रिकॉर्ड की गई चेतावनी। |

| | | | |
|---|---|---|---|
| 14. | 20.03.1986 | एलआर नियमों के नियम 15 (2) | रिकॉर्ड की गई चेतावनी। |
| 15. | 26.09.1994 | सीसीए नियमों का नियम 16 | संचयी प्रभाव के बिना दो ग्रेड वेतन वृद्धि को रोकना |
| 16. | 11.02.1997 | सीसीए नियमों का नियम 17 | रिकॉर्ड की गई चेतावनी। |
| 17. | 13.08.1991 | सीसीए नियमों का नियम 16 | निंदा |
| 18 | 20.07.1999 | सीसीए नियमों का नियम 17 | संचयी प्रभाव के बिना दो ग्रेड वेतन वृद्धि को रोकना |
| 19. | 27.03.1996 | सीसीए नियमों का नियम 17 | संचयी प्रभाव के बिना एक ग्रेड वेतन वृद्धि को रोकना |

प्रत्यर्थी संख्या 2 ने अपीलीय मंच या कानून के किसी भी सक्षम न्यायालय के समक्ष इनमें से किसी भी सजा को चुनौती नहीं दी है। इसलिए, उन सजा आदेशों ने प्रत्यर्थी सं. 2 के खिलाफ अंतिम रूप प्राप्त कर लिया है।

उपरोक्त दंड आदेशों के अलावा, वर्ष 1998-99 में प्रत्यर्थी संख्या 2 के एपीएआर में प्रतिकूल प्रविष्टियां दर्ज की गई हैं। इस प्रकार, यह नहीं कहा जा सकता है कि 1996 के नियमों के नियम 53 (1) के तहत प्रत्यर्थी सं. 2 को अनिवार्य सेवानिवृत्ति देने के लिए एक राय बनाने के लिए प्राधिकरण के समक्ष कोई सामग्री नहीं थी। वास्तव में *भारत संघ बनाम कर्नल जेएन सिन्हा, एआईआर 1971 एससी 40* में प्रकाशित मामले में कानून के अनुसार, 1996 के नियमों के नियम 53 (1) का उद्देश्य, सरकारी कर्मचारी को समय से पहले अनिवार्य सेवानिवृत्ति देने के लिए सरकार को शक्ति प्रदान करना है। इसके अलावा, यह भी नहीं कहा जा सकता है कि सार्वजनिक हित में अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश पारित करते समय संबंधित प्राधिकरण द्वारा पूरे पिछले सेवा रिकॉर्ड, साथ ही एसीआर और एपीएआर को ध्यान में नहीं रखा गया था।

यहां यह उल्लेखनीय है कि दिनांक 11-07-2000 को आयोजित अनुवीक्षण समिति के कार्यवृत्त को 12-09-2000 को समीक्षा समिति के समक्ष प्रस्तुत किया गया था, जिसमें प्रत्यर्थी संख्या 2 की अनिवार्य सेवानिवृत्ति की सिफारिश करने का निर्णय लिया गया था। अनुवीक्षण समिति उच्च और जिम्मेदार अधिकारियों से बनी थी, शक्ति केवल सरकार में निहित है, न कि मामूली अधिकारियों में। इसलिए, सरकार ने मामले के सभी तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने के बाद, 1996 के नियमों के नियम 53 (1) के तहत प्रत्यर्थी संख्या 2 की समयपूर्व सेवानिवृत्ति का आदेश पारित किया है, जिसमें सरकार को

एक निश्चित अवधि के लिए सेवा देने के बाद सरकारी कर्मचारी को सेवानिवृत्त करने के लिए सरकार को प्रदान किए गए अधिकारों का प्रयोग किया गया है। अनुवीक्षण समिति की सिफारिशों के आधार पर प्रत्यर्थी सं. 2 को अनिवार्य सेवानिवृत्ति देने में कोई अपवाद नहीं लिया जा सकता है क्योंकि इसने स्पष्ट रूप से संकेत दिया है कि सेवा में प्रत्यर्थी नंबर 2 का प्रतिधारण सार्वजनिक रूप से नहीं था।

प्रत्यर्थी सं. 2 के अधिवक्ता द्वारा उठाए गए तर्कों में कोई दम नहीं है कि बीरम राम भट्ट, कायम अली और मदन लाल अजमेरा के मामलों में, कई सजा के आदेश थे और उनके एपीएआर में कई प्रतिकूल प्रविष्टियां थीं और फिर भी उन्हें अनिवार्य सेवानिवृत्ति नहीं दी गई थी। प्रत्यर्थी सं. 2 समानता के सिद्धांत को लागू करके किसी भी नकारात्मक समानता का दावा नहीं कर सकता है क्योंकि पूर्वोक्त व्यक्तियों के खिलाफ सजा के आदेश पारित किए गए थे और उनके सेवा रिकॉर्ड में प्रतिकूल प्रविष्टियां दर्ज की गई थीं। सरकार की ओर से यह वास्तव में चौंकाने वाली, आश्चर्यजनक और खेदजनक स्थिति है कि उपर्युक्त व्यक्तियों के विरुद्ध इतनी सामग्री उपलब्ध होने के बावजूद उनके विरुद्ध कोई प्रतिकूल कार्रवाई नहीं की गई। **22 मार्च, 2022 को तय 2022 की सिविल अपील संख्या 2049-2050 में उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य बनाम रजित सिंह** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने कहा है कि समानता के सिद्धांत को लागू करके ऐसे मामलों में किसी भी नकारात्मक समानता का कोई दावा नहीं किया जा सकता है। इसलिए, अधिकरण ने समानता के सिद्धांत को लागू करके प्रत्यर्थी सं. 2 के अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश को रद्द करने और निरस्त करने में एक गंभीर त्रुटि की है। इस प्रकार, अधिकरण के निष्कर्ष ठोस तर्क पर आधारित नहीं हैं। अधिकरण ने प्रत्यर्थी सं. 2 के खिलाफ पारित दिनांक 26.09.1994 और 20.07.1999 के सजा आदेशों को रद्द और निरस्त करते हुए अपने अधिकार क्षेत्र का उल्लंघन किया है। अधिकरण ने 1998-99 के एपीएआर में प्रत्यर्थी सं. 2 के सेवा रिकॉर्ड में की गई प्रविष्टियों को अधिकरण के समक्ष प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा किसी भी चुनौती के बिना रद्द करते हुए अपने अधिकार क्षेत्र का और भी अधिक उल्लंघन किया है। अधिकरण ने यह कहते हुए गंभीर गलती की है कि जिला कलेक्टर द्वारा पारित प्रत्यर्थी सं. 2 की अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश पूर्वाग्रहों से ग्रस्त था। अधिकर के समक्ष रिकॉर्ड पर ऐसा कोई सबूत उपलब्ध नहीं था जो इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि जिला कलेक्टर प्रत्यर्थी सं. 2 के खिलाफ किसी भी पूर्वाग्रह से पीड़ित थे। यदि प्रत्यर्थी सं. 2 का मानना

था कि प्रत्यर्थी सं. 2 को अनिवार्य सेवानिवृत्ति देने के लिए समीक्षा समिति या जिला कलेक्टर की ओर से कोई पक्षपात या दुर्भावना थी, तो उन परिस्थितियों में, प्रत्यर्थी सं. 2 को अपीलीय न्यायाधिकरण के समक्ष उन सभी को एक पक्ष के रूप में पेश करना था तथा आगे उन्हें ठोस साक्ष्य प्रस्तुत करके दुर्भावना/पूर्वाग्रहों को स्थापित करना था, लेकिन यहां इस मामले में, रिकॉर्ड पर ऐसे सबूतों को जोड़े बिना, मौखिक प्रस्तुतियां दी गईं, जिन्हें अधिकरण द्वारा बिना किसी आधार के स्वीकार कर लिया गया।

इस प्रकार, मामले के इस दृष्टिकोण में, प्रत्यर्थी सं. 2 को अधिकारियों द्वारा 1996 के नियमों के नियम 53 (1) के तहत जनहित में, उचित विचार के बाद, अनुवीक्षण समिति द्वारा पूरे रिकॉर्ड की जांच करने के उपरांत, सभी वस्तुनिष्ठ विचारों के साथ-साथ व्यक्तिपरक संतुष्टि के साथ अनिवार्य सेवानिवृत्ति दी गई थी। रिकॉर्ड से यह भी स्पष्ट है कि प्रत्यर्थी सं. 2 का आचरण अच्छा नहीं था और उनके पूरे सेवा कार्यकाल के दौरान उनका कार्य प्रदर्शन असंतोषजनक पाया गया था। 1996 के नियम 53 (1) के प्रावधानों के तहत उनकी अनिवार्य सेवानिवृत्ति के लिए बार-बार दी जाने वाली सजा पर्याप्त है और यह नहीं कहा जा सकता है कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश बिना सोचे-समझे या रिकॉर्ड पर अपर्याप्त सामग्री के पारित किया गया था या ऐसा करना सार्वजनिक हित में नहीं था।

इस प्रकार, ऊपर की गई चर्चाओं को ध्यान में रखते हुए, रिट याचिका को अनुमति दी जाती है, अधिकरण द्वारा पारित दिनांक 31.08.2004 के आक्षेपित आदेश को रद्द किया जाता है और आपास्त किया जाता है और प्रत्यर्थी संख्या 2 के दिनांक 21.09.2000 के अनिवार्य सेवानिवृत्ति आदेश को रद्द किया जाता है और बरकरार रखा जाता है।

स्थगन आवेदन और सभी लंबित आवेदन, यदि कोई हों, का निपटारा किया जाता है।

**(अनूप कुमार ढांड), न्यायमूर्ति**

**Sharma NK/1**

**टिप्पणी**: इस निर्णय का हिन्दी अनुवाद निविदा फर्म **राजभाषा सेवा संस्थान** द्वारा किया गया है, जिसे फर्म के निदेशक डॉ. वी. के. अग्रवाल, द्वारा मान्य और सत्यापित किया गया है।
**अस्वीकरण**: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन व कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।